IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कल्हण कृत राजतरंगिणी की ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता

ड़ॉ बीना कौशिक

सह–आचार्य,इतिहास

सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय,अजमेर 305001

शोध पत्र सारः–

जगद्गुरू शंकराचार्य की तपोस्थली तथा ब्रह्मा पुत्र मरीचि के पुत्र महर्षि कश्यप की कर्मभूमि कश्यपमेरू पृथ्वी पर प्रकृति का स्वर्ग कहलाया। कश्मीर में भगवान मार्तण्ड (सूर्य) का विशाल मंदिर बना और यही कल्हण की राजतरंगिणी के स्वर गूंजे। शास्त्रीय भाषा संस्कृत में पद्य शैली में लेखबद्ध कुलीन परिवार के वंशज कवि कल्हण कृत राजतरंगिणी एक न्यायाधीश के समान राग–द्वेष मुक्त कश्मीर के क्रमबद्ध इतिहास का एक निर्भिक और निष्पक्षता से लेखबद्ध काव्य और इतिहास का वस्तुनिष्ठ पौराणिक ऐतिहासिक वृत्तांत है। वैदिक,पौराणिक,जैन, बौद्ध और इस्लामिक दर्शन के समन्वय से यहाँ मानवतावाद, धर्मनिरपेक्षता तथा सहिष्णुता की एक मिली–जुली संस्कृति का विकास हुआ। राजतरंगिणी में कश्मीर के राजनीतिक में शासकों की वंशावली, दरबार की नीतियों का लेखा–जोखा, आर्थिक,धार्मिक,भौगोलिक,सामाजिक और सांस्कृतिक सभी विषयों की सत्यनिष्ठ घटनाओं का प्रतिफलन है जिसमें स्पष्ट सैद्धांतिक निरूपण समाहित व समाविष्ट है। इतिहासकारों और नृवंशविज्ञानियों की कृतियों को व्यापक रूप से संदर्भित किया गया है। राजतरंगिणी आत्म–चिन्तनशील प्रक्रिया के इतिहास दर्शन में प्रभावशाली विद्वता की परिष्कृत संस्कृत की प्रामाणिक उत्कृष्ट कृति है जिसने कश्मीर के वैज्ञानिक पद्धति के अनुरूप वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण एवं विवेचन द्वारा क्रमबद्ध तरीकें से लेखबद्ध कृति में काल के गर्भ में छिपे इतिहास को समृद्ध कर तिरोहित होने से बचाया जो कश्मीर के प्राच्य इतिहास लेखन में सांस्कृतिक विरासत का बहुमूल्य दस्तावेज़ है ।

मुख्य बिन्दूः कश्यपमेरू, कल्हण, राजतरंगिणी, कश्मीर, संस्कृत,इतिहास

विषय परिचय –

इतिहास लेखन एक इतिहासकार के दृष्टिकोण का दार्शनिक विवेचन होता है।जिसमें वह राष्ट्रीय सांस्कृतिक अथवा सामाजिक प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन कराने का प्रयत्न करता है। इतिहास लेखन के संदर्भ में एक इतिहासकार मानवता के अतीत के अनुसंधान के अपरिमित विस्तार का किसी नियमित आधर पर सज्जित करके मानव कार्य–कलाप के विशाल क्षितिज को एक समन्वयात्मक दृष्टि की विचारधारा के अनुरूप लेखन करता है। कश्मीर के प्राच्य इतिहास लेखन में कवि कल्हण द्वारा1148–50 ई. के मध्य संस्कृत भाषा में लेखबद्ध राजतरंगिणी में लेखक ने विभिन्न कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन कर वैयक्तिक तथ्यों के स्थान पर सार्वजनिक शासकीय प्रवृत्तियों को निष्पक्षता से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ऐतिहासिक गवेषणा के उन्नतिशील विस्तार और गम्भीरता के साथ 1184ईसा पूर्व के राजा गोनंद से राजा विजय सिम्हा के 1129 ई.तक के कश्मीर के प्राचीन राजवंशो की राजनीतिक व पारंपरिक घटनाओं को भी सम्मिलित कर समन्वय परक और व्याख्यापरक इतिहास प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। कल्हण के द्वारा विभिन्न संस्कृत काव्य साहित्य और अभिलेखों का अध्ययन कर कालक्रम को निर्धारित किया है। जो शक्तिशाली कश्मीरी राजाओं के प्रमुखों की नीतियों, कार्यो और संघर्षो का दस्तावेजीकरण है जो ऐतिहासिक स्पष्टीकरण करता है।

परिकल्पना–ऐतिहासिक कृति राजतरंगिणी इतिहास की आधुनिक वस्तुवादी धारणाओं से प्रेरित प्राचीन दृष्टिकोण के तथ्यात्मक इतिहास का प्रस्तुतीकरण है जिससे इस कृति की प्राथमिक स्त्रोत के रूप में तत्संबंधित प्राच्य व समसामयिक ऐतिहासिक विषयों के लिए इसकी उपादेयता अधिक प्रासंगिक है।

विधि– अनुशासनात्मक व तुलनात्मक पद्धति।

उद्देश्य – ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता को प्रस्तुत करना ।

अस्थिर, अनियमित और अनिश्चित कालानुक्रमिक घटनाओं व स्थानों को प्रामाणिकता के द्वारा अंकित करने का प्रयास किया है।

महत्त्व – राजतरंगिणी अर्थात् **राजाओं की नदी।** उत्तर– पश्चिमी भारतीय उपमहाद्वीप विशेषतया कश्मीर के राजाओं का संस्कृत काव्य के द्वारा एक ऐतिहासिक और पौराणिक लोक जीवन का राष्ट्रीय इतिहास प्रस्तुत करना रहा। प्राच्य काल से ही कश्मीर भूमि वैदि बौद्ध और जैन धर्मो की आध्यात्मिक विरासत
रहीहै।इतिहासविद्कल्हणनेराजतरंगिणीमेंदर्शनशास्त्र,व्यायामविद्या,सैनिकशास्त्र,जादू–टोना,योगशास्त्र,तर्कशास्त्र,ज्योतिशास्त्र,नाट्यशास्त्र तथा शरीरशास्त्र आदि सभी विषयों का उल्लेख है। कश्मीर अर्थात् विद्वानों की भूमि।

भारत का सिरमौर मुकुट कश्यपमेरू या कश्मीर जो उत्तर– पूर्व से 84 मील लम्बा और दक्षिण–पश्चिम से 20 से 25 मील चौड़ा, 33^0से $34^0 35'$ उत्तर और $74^0 8'$ के मध्य 75^0 25′ पूर्व में स्थित है। औसत समुद्र तल से 12,000 से 26,000 फीट की ऊचाई पर स्थित मधुमति और किश्नगंगा नदियों के संगम के पास एक पहाड़ी पर आबाद क्षेत्र कश्मीर राजनीतिक रूप से गांधार[1], कम्बोज[2] और कुरू[3] महाजनपदों के भौगोलिक क्षेत्रों तक विस्तृत रहा। ''भारतमाता का नंदनवन और धरती का स्वर्ग कश्मीर घाटी प्रकृति की अद्भुत चित्रकारी अनुपम सौन्दर्य ,प्राकृतिक सुंदरता के प्रतीक हरे–भरे मैदान और खूबसूरत वादियों के कारण अपनी सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है। हमारे प्राचीन ग्रंथों में भी कश्मीर को स्वर्ग की उपमा दी गई है। मुगल बादशाह शाहजहाँ ने भी कश्मीर की सुंदरता से प्रभावित होकर कहा था, 'गर फिरदौस वर–वरूए जमी अस्त, हमीं अस्त, हमीं अस्त' यानी इस पृथ्वी पर यदि कहीं स्वर्ग है तो वह यहीं है। झेलम, डल और वुलर झीलें इसकी शोभा बढ़ाती है। स्थान–स्थान पर जल की मीठी चश्में है। सर्दी में घाटी में बिछी बर्फ की सफेद चादर मन में एक शांति का अनुभव कराती है। चिनार चीड और देवदार के वृक्षों और अन्य जड़ी–बूटियों से घिरी हुई घाटी का पर्यावरण शुद्ध एवम् स्वास्थ्यवर्धक है। फिरन, कांगडी, महिलाओं के सिर पर पटका (कपड़ा), हिन्दू–मुसलमान की टोपी एवम् पगड़ी–यहाँ की वेशभूषा है।

वैदिक,पौराणिक, बौद्ध और इस्लामिक दर्शन के समन्वय से यहाँ मानवतावाद, धर्मनिरपेक्षता तथा सहिष्णुता की एक संश्लेषित संस्कृति का विकास हुआ। संस्कृति समाज सापेक्ष है,संस्कृति का मूल सम्बन्ध बुद्धि से है। जैसे–जैसे मनुष्य के ज्ञान और क्रिया शक्ति का विकास होता है वैसे–वैसे संस्कृति का भी विकास होता है। प्रत्येक मनुष्य का जीवन एक विशिष्ट आचार–विचार, रीति, व्यवहार, और धर्म से जुड़ा होता है जो उसके संस्कारों का निर्माण करते हैं –संसार के अन्य प्राणियों से अलग एक विशिष्टाता प्रदान करते हैं। इस प्रकार संस्कृति का प्रारम्भ मनुष्य के शिक्षण और संस्कार से होता है। संस्कृति को किसी काल विशेष की सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। यह देश काल और परिस्थितियों के अनुसार निरन्तर विकसित होती है। यह मनुष्य की सम्पूर्ण जीवन शक्तियों और प्रगतिशील साधनाओं का सामूहिक प्रतिफलन है। ऐतिहासिक ग्रन्थ के रूप में भी इसकी महत्ता अक्षुण्ण है। यह ग्रन्थ महाकवि कल्हण की अक्षयकीर्ति का आधार है। कश्मीर के राजवंशों के उत्थान पतन का इतिहास वस्तुनिष्ठ रूप में प्रस्तुत है। [4]

प्राचीन स्त्रोतों में कश्यपमेरू का इतिहास प्रथम राजा कश्यप ऋषि से प्रारंभ होता है।[5]

कवि विल्हण ने कश्मीर को माँ शारदा का देश कहा है–

नमस्ते शारदे देवि कश्मीर पुरवासिनी।

त्वामहं प्रार्थये नित्यं विद्यादानं च देहिमे।।

सहोदराः कुंकमकेसराणां भवन्ति नूनं कविता विलासाः।

न शारदादेशमपास्य दृष्टस्तैषां यदन्यत्र मय प्ररोहः।[6]

हिमालय में कश्मीर,उत्तर भारत में काशी,पूर्व में नवद्वीप और दक्षिण में कांची पठन–पाठन के केन्द्र रहें। कश्मीर पण्डित परम्परा तथा विद्वान ग्रन्थकारों के लिए प्रसिद्ध रहा। राज शब्द की अपेक्षा पण्ड़ित शब्द उत्तम माना जाता था जो विद्वता का प्रतीक था।

राजतरंगिणी ग्रन्थ का परिचय –

राजतरंगिणी एक ऐतिहासिक महाकाव्य है। इसमें आठ तरंग में कुल 7,826 श्लोकों में काश्मीर मण्डल का विस्तृत इतिहास प्रस्तुत किया गया है। ग्रन्थ के तरंगों की श्लोक–संख्या, उनमें वर्णित राजाओं की संख्या और उनके शासनकाल के वर्षों के कालक्रम का निर्धारण है–

1. प्रथम तरंग – इसमें कुल 373 श्लोक हैं। इसमें आरम्भ से लेकर कश्मीर के आरम्भिक 38 राजाओं के 1014 वर्ष और नौ दिन के शासन का उल्लेख है।2. द्वितीय तरंग – इसमें 171श्लोकों में छः राजाओं के 192 वर्ष के शासन का संक्षिप्त इतिहास है।3. तृतीय तरंग – इस तरंग में 530 श्लोक हैं और इसमें कुल दस राजाओं के 536 वर्ष के शासन काल का उल्लेख किया गया है।4. चतुर्थ तरंग – इस तरंग में 720 श्लोक हैं। इसमें वर्णित राजाओं की संख्या 17 है और उनका शासनकाल 260 वर्ष छः महीने

10 दिन है।5. पंचम तरंग –583 श्लोकों वाले इस तरंग में कुल ग्यारह राजाओं का वर्णन किया गया है जिन्होंने कुल 83 वर्ष और चार महीनों तक कश्मीर पर शासन किया था। 6. षष्ठम् तरंग – इसमें 368 श्लोकों में दस राजाओं के 64 वर्ष आठ मास तथा दस दिन के शासन काल का वर्णन किया गया है।7. सप्तम तरंग – इसमें 1732 श्लोक हैं। विस्तार की दृष्टि से यह तरंग पूर्ववर्ती छः तरंग से पर्याप्त बड़ा, प्रायः उन सबके सम्मिलित रूप के बराबर है। इसमें कश्मीर मण्डल के छः राजाओं के 98 वर्ष (3 दिन कम) के शासन काल का विस्तृत इतिहास वर्णित है।

8. अष्टम तरंग – यह 'राजतरंगिणी का वृहद तरंग है जिसमें 3,449 श्लोक हैं। इस तर तरग में मात्र छः राजाओं के 48 वर्षों के शासनकाल का विशद इतिहास वर्णित है। इसमें भी बाईस वर्षों को इतिहास इस ग्रन्थ में वर्णित अन्तिम राजा जयसिंह के शासनकाल का है।[7]
इस प्रकार 'राजतरंगिणी' में कश्मीर मण्डल के लगभग 4200 वर्षों का इतिहास वर्णित हुआ है। इसकी द्वितीय तरंग सबसे छोटा और अष्टम तरंग सबसे बड़ा है। राजाओं की संख्या की दृष्टि से और उनके शासनकाल के उल्लेख की दृष्टि से प्रथम तरंग का विस्तार अधिक है। इतिहासकार कल्हण द्वारा उसके वर्णन की शैली भी विशद होती गई है। ग्रन्थारम्भ के छः तरंग में वर्षों तक शासन करने वाले कई राजाओं के शासनकालों तथा कार्यकलापों का संक्षिप्त वर्णन किया गया है जबकि अन्तिम दो तरंग में केवल 12 राजाओं के 145 वर्षों के शासनकाल का वर्णन लगभग साढ़े पाँच हजार श्लोकों में किया गया है जो कि सम्पूर्ण ग्रन्थ के दो तिहाई भाग से भी अधिक है।

राजतरंगिणी के प्रत्येक तरंग के आरम्भ में कवि द्वारा शिव–पार्वती के युगल स्वरूप की भावपूर्ण स्तुति की गई है जो कवि के परम शिवभक्त होने के परिचायक होने के साथ–साथ महाकाव्य के सर्गारम्भ में मंगलाचरण के विधान की भी पूर्ति की द्योतक है। **राजतरंगिणी** के प्रारम्भ में कल्हण ने विस्तारपूर्वक ग्रन्थ की भूमिका प्रस्तुत की है जिसमें अपने पूर्ववर्ती इतिहासकारों के उल्लेख के साथ अपने ग्रन्थ रचना के प्रयोजन को भी प्रतिपादित किया है। इस सम्बन्ध में कवि का कथन है, ''मेरे द्वारा रचित यह इतिहासग्रन्थ विभिन्न राजाओं के शासनकाल में देशकाल की उन्नति एवं अवनति के विषय में पुरातन ग्रन्थों से उत्पन्न भ्रम को दूर करने में सहायक होगा।[8]

ग्रन्थ में विषय भूमिका के रूप में कश्मीर मण्डल का विस्तृत और वैभवपूर्ण वर्णन हुआ है। इसमें राजवंशों का इतिहास प्रस्तुत करने के साथ–साथ कश्मीर मण्डल की संस्कृति के विभिन्न उपादानों यथा–वस्त्राभूषण, भोजन, मान्यताएँ एवं रीति–रिवाज़, आर्थिक जीवन, कृषि, विभिन्न कलाओं, आमोद–प्रमोद के साधनों आदि का सम्यक् निरूपण हुआ है।

राजतरंगिणी का रचनाकाल –

'ऐतिहासिक महाकाव्यों की परम्परा में राजतरंगिणी एक अनूठी एवं सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसमें कश्मीर के राजाओं का इतिहास राजा युधिष्ठिर के समकालीन राजा गोनन्द प्रथम से लेकर राजा जयसिंह के शासनकाल के बाईसवें वर्ष तक लेखनीबद्ध किया गया है।[9]

राजा जयसिंह कश्मीर के प्रसिद्ध राजा थे जिनका शासनकाल 1127 ई0 सेलगभग1149 ई0 तक

माना जाता है। राजतरंगिणी में उल्लेख है कि जिस समय कवि ने इस ग्रन्थ को पूर्ण किया था

उस समय राजा जयसिंह के शासन को 22 वर्ष पूर्ण हो चुके थे और 23वां वर्ष चल रहा था।[10]

इसके अनुसार यह रचना 1150 ई. में पूर्ण हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि सन् 1150 के आरम्भ में ही यह रचना पूर्ण हुई और इसी के साथ राजा जयसिंह का शासनकाल भी पूर्ण हो गया। क्योंकि इतिहासकारों ने उनका शासनकाल 1149 ई0 तक ही माना है। ग्रन्थारम्भ के विषय में कवि की आत्मस्वीकृति है कि उसने अपने महाकाव्य का प्रारम्भ 4224वें लौकिक वर्ष के आरम्भ में किया था[11]

और ग्रन्थ–समाप्ति के पूर्व यह बताया गया है कि 4225वाँ लौकिक वर्ष समाप्त हो गया। अर्थात् इस ग्रन्थ की रचना में कवि को दो वर्षों का समय लगा। अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि राजतरंगिणी का रचनाकाल सन् 1148 से 1150ई. है।

राजतरँिणी में वर्ष–गणना के लिए लौकिक वर्ष का प्रयोग किया गया है। ग्रन्थ के आरम्भ को 4224वाँ लौकिक वर्ष अर्थात् 1148ई0 बताया गया है। इस दृष्टि से कश्मीर का लौकिक वर्ष 4224–1148=3076ई0पू0 प्रारम्भ होता है। कलिवर्ष का प्रारम्भ 3101ई0 पूर्व माना जाता है। अर्थात् कलियुग का आरम्भ 3101+78=3179 शक् काल पूर्व से होना मान्य है।[12]

फलतः प्रतीत होता है कि कश्मीर का लौकिक वर्ष कलिवर्ष के प्रायः पच्चीस वर्ष बीतने पर प्रारम्भ हुआ। महाकवि कल्हण ने कहा है कि कलि के 653 वर्ष व्यतीत होने पर कौरव–पाण्डव हुए थे अतः युधिष्ठिर का समय 2526 शक् काल पूर्व होना माना जा सकता है। युधिष्ठिर से लेकर जयसिंह तक कुल 3596 वर्षों का इतिहास राजतरँिणी में दिया गया है। यदि इसमें युधिष्ठिर के समय तक गत कल के 653 वर्ष भी मिला दिया जाय तो यह संख्या 4249 वर्ष होती है। यदि कलि वर्ष का प्रारम्भ 3101ई0पू0 माना जाय तो कल्हण की उपर्युक्त गणना का समय 4249–3101=1148ई0 निकलता है। अर्थात् कल्हण ने अपने ग्रन्थ की रचना 1148ई0 में प्रारम्भ की थी। यह तर्क का विषय हो सकता है कि कलि वर्ष या लौकिक वर्ष किस तिथि से आरम्भ हुआ परन्तु कवि ने समय की जिस गणना–पद्धति का प्रयोग किया है उसके अनुसार ग्रन्थ के रचनाकाल के विषय में कोई सन्देह नहीं रह जाता है।

इस प्रकार विभिन्न अन्तःसाक्ष्यों के आधार पर राजतरंगिणी का रचनाकाल 1148–50 सिद्ध होता है। महाकवि कल्हण ने अपने पूर्ववर्त्ती कई इतिहासकारों के लिखे हुए इतिहासग्रन्थों का अध्ययन किया था और उन सबमें उन्हें इतिहास विषयक् पर्याप्त दोष दिखाई पड़े। उन ग्रन्थों में पर्याप्त भ्रम की भी स्थिति बनी हुई थी, अतः एक दोषरहित एवं प्रामाणिक इतिहास–लेखन की अभिलाषा राजतरंगिणी की रचना की पीठिका रही है। इस सम्बन्ध में स्वयं इतिहासकार का अभिमत द्रष्टव्य है–''मैंने प्राचीन विद्वानों द्वारा रचित राजकथा विषयक ग्यारह ग्रन्थ पढ़े हैं और नील मुनि द्वारा विरचित 'नीलमतपुराण' का भी अध्ययन किया है। कल्हणनेप्रमुखतःपूर्ववर्तीरचनाओं–वेद,पुराण,व्याकरण,अर्थशास्त्र,स्मृति,आयुर्वेद,ज्योतिषशास्त्र;दामोदर गुप्त केकुट्टनीमतम; भरत के नाट्यशास्त्र;बिल्हण का 'विक्रमांकदेव चरित', अभिनवगुप्त का 'तन्त्रलोक'; क्षेमेन्द्र का 'महाभारत मंजरी', 'वृहतकथामंजरी', 'औचित्य विचार'; मम्मट का 'काव्यप्रकाश'; वाल्मीकि की रामायण;वेदव्यास का महाभारत; कालिदास के रघुवंश,मेघदूत; बाण का 'हर्षचरित'; नील मुनि द्वारा रचित नीलमत पुराण (कश्मीर का राष्ट्रीय महाकाव्य संस्कृत भाषा का कास्मिरा महात्म्य का रचनाकाल 6 से 8वीं शताब्दी); कश्मीरी भाषा की प्रथम कवयित्री ललद्यद (लल्लेश्वरी) जो कश्मीरी निर्गुण (निराकार शिव) संत परम्परा की प्रतिनिधि कवयित्री रही[13] आदि के संस्कृत भाषा में लेखबद्ध बहुमूल्य निधियों का तुलनात्मक शैली में अध्ययन कर उनके द्वारा लिखित शास्त्रों में उल्लेखित कश्मीर के भौगोलिक, राजनीतिक,आर्थिक,धार्मिक व सामाजिक–सांस्कृतिक प्राचीन अनुश्रुतियों व समसामयिक घटनाओं के साथ–साथ कल्हण ने इन प्राचीन इतिवृत्तों के अतिरिक्त मन्दिरों के शिलालेखों(प्रतिष्ठा– शासन), भूदान के प्रमाण पत्रों(वास्तुशासन),प्रशंसात्मक लेख(प्रशस्तिपट्ट) मुद्राओं, मौखिक परम्पराओं; जनश्रुतियों आदि लिखित शास्त्रों के अतिरिक्त नगरों,विहारों,स्तूपों, मन्दिरों और अग्रहारों को भी ऐतिहासिक स्त्रोतों के रूप में प्रचुर मात्रा में संकलित सामग्री को राजतरंगिणी में शामिल अवश्य किया, परन्तु इतिहास लेखन कीस्पष्टता व निष्पक्षता से प्रेरित होकर ही शोध लेखन की पद्धति वैज्ञानिक और तथ्यात्मक दृष्टिकोण से राग–द्वेष से पृथक रहकर केवल तथ्यों के निरूपण के लिए ऐतिहासिक सत्यता को निर्भिकता से प्रस्तुत कर एक समृद्ध और विविधतापूर्ण वस्तुनिष्ठ कृति को शुद्धता से लेखबद्ध किया।[14]

कल्हण का मन्तव्य था कि मेरे द्वारा रचित यह इतिहासग्रंथ विभिन्न राजाओं के शासनकाल में देश–काल की उन्नति एवं अवनति के विषय में पुरातनग्रन्थों से उत्पन्न भ्रम को दूर करने में सहायक सिद्ध होगा।''[15]

इतिहासकार कल्हण का परिचय –

महाकवि कल्हण का जीवनवृत्त अधिकांश में प्रामाणिक रूप से प्राप्त होता है। उनके पिता चंपक कश्मीर नरेश महाराज हर्षदेव (सन् 1089–1101ई0) के महामंत्री थे। राजा हर्ष का शासनकाल 1101 ई0 तक रहा था और कल्हण ने अपने पिता के साथ रहकर हर्षदेव के जीवन का उत्थान–पतन देखा था जिसका सजीव चित्रण उन्होंने 'राजतरँिणी' के सप्तम तरंग में किया है। इससे यह निश्चित होता है कि कल्हण का जन्म 1101ई0 के पहले हुआ था। इसी प्रकार राजा जयसिंह के राज्यकाल में 'राजतरंगिणी' की रचना होने से यह भी सिद्ध है कि जयसिंह के राज्यकाल (1150ई0 तक) कल्हण निश्चित रूप से विद्यमान थे। कल्हण के जन्म और मृत्यु का स्पष्ट उल्लेख नहीं प्राप्त होता है। कतिपय अन्यान्य कवियों ने अपने ग्रन्थों में कल्हण का उल्लेख भी किया है परन्तु उनमें भी कल्हण की जन्म–तिथि या मृत्यु–तिथि नहीं मिलती है। उदाहरणार्थ 'श्रीकण्ठचरित्' नामक ग्रन्थ के कर्त्ता कवि मंखक ने अपने इस महाकाव्य में कल्हण का उल्लेख 'कल्याण' नाम से किया है। उन्होंने कल्हण (कल्याण) के गुरु अलखदत्त का उल्लेख किया है और लिखा है कि अलखदत्त की प्रेरणा से कल्हण ने कश्मीर के राजाओं का इतिहास लिखने का विचार किया। 'राजतरंगिणी' में प्रत्येक तरंग के आरम्भ में शिव–पार्वती की भावपूर्ण प्रस्तुति कल्हण के शैव होने की सूचना देती है किन्तु अन्यान्य देवी–देवताओं के प्रति भी उनकी श्रद्धा थी और वे बौद्ध धर्म के प्रति भी सहिष्णु थे क्योंकि उन्होंने 'राजतरंगिणी' में विष्णु, ब्रह्मा, सरस्वती आदि का भी श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया है और बुद्ध के प्रति भी श्रद्धावनत दिखाई पड़ते हैं। स्थान–स्थान पर उन्होंने राजाओं द्वारा बौद्ध–बिहारों के निर्माण और संचालन के लिए धन देने का उल्लेख किया है।

इसी प्रकार 'राजतरंगिणी' में ब्राह्मणों के महत्त्व और उन्हें प्रचुर परिमाण में धन और गाँव दान किए जाने का उल्लेख किया है जिससे वे वर्ण–व्यवस्था के कठोर अनुयायी दिखाई पड़ते हैं। इन सभी अन्तःसाक्ष्यों और बहिर्साक्ष्यों के आधार पर महाकवि कल्हण के बारे में जानकारी प्राप्त होती है–

महाकवि कल्हण का जन्म सन् 1100ई0 के लगभग कश्मीर प्रदेश के प्रवरपुर (परिहासपुर) नामक नगर में हुआ था। वे वर्ण से ब्राह्मण थे। उनके पिता 'चंपक' कश्मीर नरेश महाराज हर्षदेव के महामात्य थे। कल्हण के चाचा 'कनक' राजा हर्षदेव के प्रिय पात्रों में से थे। कनक संगीत विद्या के प्रेमी थे और महाराज हर्ष उनको पुरस्कार आदि से संतुष्ट रखते थे। राजा हर्ष की मृत्यु के उपरान्त कनक काशी में जाकर वैराग्यमय जीवन व्यतीत करने लगे। [16]

कल्हण का बाल्यकाल अपने विद्वान और राजनीतिज्ञ पिता चंपक के पास व्यतीत हुआ। पिता के सम्पर्क में रहकर कल्हण ने विभिन्न ग्रन्थों का यथेष्ट अध्ययन किया था। धर्मग्रन्थों, ललित साहित्य ग्रन्थों, इतिहास ग्रन्थों आदि का अनुशीलन कल्हण ने बड़े मनोयोग से किया था। कल्हण के गुरु अलखदत्त साधु स्वभाव के विद्वान पुरुष थे और उन्हीं की प्रेरणा से कल्हण ने 'राजतरंगि.णी' ग्रन्थ की रचना का उपक्रम किया था। प्रसिद्ध आलंकारिक रुय्यक से भी कल्हण का सम्पर्क था क्योंकि रुय्यक कश्मीर नरेश जयसिंह के सभापण्डित थे। रुय्यक के शिष्य और संस्कृत भाषा के श्रेष्ठ कवि मंखक भी कल्हण के सम्पर्क में रहे थे इन सभी से भी पारस्परिक विचार–विमर्श के फलस्वरूप कल्हण ने पर्याप्त ज्ञान अर्जित किया था। संस्कृत के एक अन्य महाकवि विल्हण भी कल्हण के समकालीन थे। कल्हण ने उनकी कविताओं का पर्याप्त अनुशीलन किया था इसीलिए इनके काव्य को विल्हण की कविता से 'संक्रान्त' कहा गया है।यद्यपि कल्हण के पिता चंपक हर्ष के महामन्त्री थे और राजा हर्ष की मृत्यु के बाद भी जीवित थे परन्तु सम्भवतः उन्होंने राजनीति में भाग लेना त्याग दिया था अतः कल्हण भी राजनीतिक विषयों से प्रायः अलग ही थे और उन्होंने अपने को काव्य–रचना तक ही सीमित रखा था। यही कारण है कि एक महामात्य के पुत्र और स्वयं भी अत्यन्त विद्वान होते हुए भी कल्हण ने कोई राजकीय पद नहीं स्वीकार किया।[17]

संस्कृति –

'राजतरंगिणी' में वर्णित संस्कृति भारतीय संस्कृति है। भारतीय संस्कृति समन्वयात्मक है अर्थात् विचारधाराओं, मतों, परम्पराओं, व्यवहार, सम्पत्ति आदि में भिन्नताएँ होते हुए भी भिन्नताओं का प्रवाह समन्वय में ही समाप्त होता रहा है। समन्वयवादिता, उदारता, एकात्मक अनेकता, संलिष्टता, अवसरानुकूलता, गतिशीलता, पारभौतिकता तथा सूक्ष्मता, भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ हैं जो संसार की अन्य संस्कृतियों से भारतीय संस्कृति को विशिष्ट स्थान प्रदान करती हैं।[18]

'राजतरंगिणी' में एक विशाल राज्य के अनेक शताब्दियों के अन्तर्गत विभिन्न राजवंशों, सामाजिक परम्पराओं, धार्मिक प्रवृत्तियों, राजनैतिक उत्थान–पतनों, आर्थिक नीतियों, नैतिक मान्यताओं आदि का वृहद् इतिहास है। इसमें हिन्दू, बौद्ध, जैन आदि धर्मों तथा शैव, शाक्त, वैष्णव आदि सम्प्रदायों में प्रचलित रीति–नीतियों का प्रमाणिक चित्रण हुआ है। इस प्रकार इन धर्मों एवं मतों के सामूहिक चित्रण से कश्मीर मण्डल की समन्वय प्रधान संस्कृति प्रस्तुत की गई है।

शासन–कार्य में राजा की सहायता के लिए एक मंत्रिपरिषद होती थी, मंत्रिपरिषद का एक प्रधानमंत्री होता था। अन्य मंत्रियों की संख्या राजा की इच्छा पर निर्भर करती थी। अन्य मंत्रियों में विदेशीमंत्री, अर्थ मंत्री, पण्ड़ित चविरुद युक्त मंत्री आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। मंत्रिपरिषद के अतिरिक्त शासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए अनेक विभाग तथा उनके अध्यक्ष थे। इनमें से प्रमुख पद इस प्रकार थे–धर्माध्यक्ष, न्यायाधीश, धनाध्यक्ष, अर्थनायक, सन्धिविग्रहिक, प्रतिहार, महाप्रतिहार, कम्पनेश, नगरपाल, दण्डनायक, द्वारपति, ग०जवर, राजानक, पादाग्रपदाधिकारी, द्वाराधीश, गोशालारक्षक, घातक आदि। राजा हर्ष के समय में तो देवोत्पाटन नायक और पुरीष् नायक जैसे पद भी सृजित हुए थे।[19]

'राजतरंगिणी' में राजा द्वारा किए जाने वाले विभिन्न वांछनीय एवं अवांछनीय कृत्यों का विस्तृत विवरण मिलता है राज्य द्वारा जनता पर लगाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के करों का भी इसमें विस्तृत उल्लेख हुआ है। ये कर कई प्रकार के थे। कृषकों को कृषि अथवा उत्पादनका एक विशेष अंश कर के रूप में राज्य को देना पड़ता था। वस्तुओं के आयात तथा निर्यात पर भी चुंगी ली जाती थी। खानों, वनों, उद्यानों, नाव, बाजारों, मन्दिरों, पुलों, दंगलों, मेलों आदि से भी राज्य की आय होती थी। सम्पन्न लोग राजा को भेंटोपहार भी दिया करते थे।

न्याय व्यवस्था के लिए स्वतंत्र न्यायालय भी होते थे। राजा स्वयं भी मुकदमों की सुनवाई करके फैसला करता था। न्यायालय में निष्पक्ष निर्णय की महत्ता सर्वोपरि मानी जाती थी और इसके लिए योग्य धर्माधिकारी नियुक्त किए जाते थे। दोषियों को धर्मानुसार उपयुक्त दण्ड दिया जाता था जिसमें सम्पत्ति–हरण, देश–निर्वासन अथवा शूलारोपण द्वारा मृत्युदण्ड जैसे दण्ड होते थे।[20]

स्पष्ट है कि 'राजतरग्णिी' में महाकवि कल्हण ने कश्मीर मण्डल के सुदीर्घकालीन इतिहास को प्रस्तुत करते हुए राज्य और समाज के सभी सम्भव पक्षों पर दृष्टि डाली है। इस ऐतिहासिक कृति में राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि सभी विषयों का प्रामाणिक समावेश करके महाकवि ने सर्वांग लेखन को ऐतिहासिक बना दिया है जिससे यह ग्रन्थ नीरस, ऐतिहासिक विवेचन न होकर मनोरम गाथाओं से परिपूर्ण लालित्यपूर्ण ऐतिहासिक महाकाव्य बन गया है।

'राजतरंगिणी' में सिद्धान्त रूप में तो नारियों की उच्च सामाजिक स्थिति का उल्लेख हुआ है– कवि ने कश्मीर देश को पार्वती का स्वरूप तथा उसके राजा को साक्षात् शिव बताया है, परन्तु सम्पूर्ण ग्रन्थ में नारियों की यह महिमामण्डित स्थिति कहीं भी नहीं दिखाई पड़ती। यदि कतिपय पतिपरायणा स्त्रियों के सती होने के अवसर पर उन्के यशोगान को छोड़ दिया जाय तो सम्पूर्ण ग्रन्थ में स्त्रियों को प्रायः भोग–सामग्री केरूप में ही चित्रित किया गया है। राजाओं के अन्तःपुर में बहुत अधिक संख्या में रानियाँ हो तो होती ही थीं; दासियों, देवदासियों, रखैलों और वेश्याओं की भी वहाँ कमी नहीं होती थी। ये स्त्रियाँ राजाओं को अपने प्रेम–पाश में आबद्ध करके राजनैतिक षड्यंत्रों में भी सम्मिलित रहती थीं। कई तो ऐसी स्त्रियों का भी वर्णन हुआ है जो पहले किसी एक राजा या सामन्त की प्रेमिका थीं और अवसर देखकर किसी अन्य पुरुष के साथ हो गईं। कहीं कोई पुत्र वधू अपने श्वसुर का प्रेम प्राप्त करके अपने पति को ही मारने के षड्यंत्र में सम्मिलित दिखाई गई है।[21]

'राजतरंगिणी' में पति परायणा स्त्रियों का पति की मृत्यु के बाद उनकी चिता में सती हो जाना अत्यन्त पुनीत और यश प्रदान करने वाला कार्य दिखाया गया है। ग्रन्थ के आरम्भ से अन्त तक की कथा में 50 के लगभग संख्या में स्त्रियों के सती होने का उल्लेख मिलता है। चन्द्रलेखा, वणिकपत्नी, वाकतुष्टा, राजा शंकरवर्मा की सुरेन्द्रवती आदि तीन रानियाँ, त्रैलोक्य देवी, बिम्बा, सूर्यमती, सहजा, वत्सराज की छः पत्नियाँ, कुमदलेख, वल्लभा आदि के चरित्र सती नारियों की श्रेणी में आदर्श के रूप में दिखाए गए हैं।[22]

'राजतरंगिणी' में कश्मीर के चार हजार वर्षों से भी अधिक के इतिहास में केवल तीन रानियाँ ही राजसिंहासन की अधिकारिणी बन पायीं–रानी यशोमती, रानी सुगन्धा और रानी दिद्दा। परन्तु इन रानियों को भी शासन का अधिकार बड़ी विषम परिस्थितियों में और अत्यल्प काल के लिए प्राप्त हुआ था। एक अन्य रानी श्रीलेखा ने जब अपने पुत्र हरिराज का अभिचार क्रिया के द्वारा वध कराकर स्वयं अपना राज्याभिषेक कराने की चेष्टा की तो उसे जनमत के विरोध का सामना करना पड़ा और राज्याधिकारियों ने उसके अल्पवयस्क पुत्र अनन्तदेव को राजसिंहासन पर बिठाना पड़ा।[23]

''दर्शन के क्षेत्र में कश्मीर का शैव दर्शन या त्रिक दर्शन विशेष महत्व रखता है। इस दर्शन के तीन महान आचार्य वासुगुप्त, कल्लाथा और अभिनव गुप्त हुए हैं।कनिष्क के समय में दर्शन की एक अन्य शाखा बौद्ध धर्म की महायान का सूत्रपात हुआ। इस विचारधारा को वासुमित्र और नागार्जुन ने आगे बढ़ाया। ैवैदिक और कश्मीरी संस्कृति का समन्वय वैसे तो बहुत पहले ही हो गया था, परन्तु कश्मीर के धार्मिक ग्रंथों में यह देखने को मिलता है कि भगवान 'शिव' को देवता 'इंद्र' से अधिक महत्व दिया जाता था। बौद्धों और यहूदियों ने कश्मीरी इतिहास तथा संस्कृति पर गहरा प्रभाव डाला। नागा सभ्यता से बौद्ध धर्म के युग तक की यात्रा बहुत अनुकूल रही है। शैववाद तथा कश्मीरी तंत्रवाद ने मिलकर बौद्ध धर्म को कश्मीरी रंग में प्रस्तुत किया। यहाँ की स्थानीय आस्थाएँ, वैदिक चिंतन तथा बौद्ध धर्म के स्वरूप को कश्मीर के महानतम दार्शनिकों

अर्थात् वासुगुप्त तथा अभिनव गुप्त ने 'कश्मीरी शैववाद' या 'त्रिक दर्शन' का नाम दिया। अपनी नयनाभिराम प्राकृतिक सुंदरता के अलावा कश्मीर के मंदिरों और ललित कला में निहित यहाँ की वास्तुकला आकर्षण का मुख्य केन्द्र रही है। मार्तण्ड और अवंन्तिपुर के मंदिर वास्तुकला के श्रेष्ठ उदाहरण है।[24]

कल्हण की कृति राजतरंगिणी ने प्राचीन इतिवृत्तों के महत्त्व को अभिभूत कर दिया। इस ग्रन्थ की रचना1148–1149या 114971150 ईस्वी में हुई।कल्हण जाति से ब्राह्मण थे जिनका जन्म कश्मीर के परिहासपुर में हुआ। पिता चम्पक राजा हर्ष के समय एक उच्चस्तरीय काश्मीरक महामात्र थे। कल्हण ने संस्कृत में उच्च शिक्षा प्राप्त की और काव्य रचना में अद्भुत कौशल प्राप्त था यहीं कारण है कि उसने तरंगिणी अथवा नदी की तुलना राज्य से की है।[25]

कल्हण का लेखन को सर मार्क ऑरेल स्टाइन[26] ने दो भागों में विभक्त था–1. प्राचीन युग जो महाभारत काल से गोनन्दीय वंश के अंत तक रहा।2. अर्वाचीन युग जो कार्कोट वंश के प्रादुर्भाव से कल्हण के समय तक रहा।

कल्हण का लेखन करने का उद्देश्य कश्मीर के राजाओं, मंत्री,सभासद और सेनानायक आदि सभी जो अपने कर्त्तव्य से विमुख हो रहे थे कल्हण ने उन सभी के समक्ष वंशावली का गुणगान कर उनकी उद्दात राष्ट्रीय भावनाओं को पुनः जागृत कर लुप्त व विस्मृत इतिहास और भावी राज की रक्षा की।उसको विश्वास था कि उसके ऐतिहासिक काव्य के पठन–पाठन से भावी राजा आदर्शवादी व जनता के हितैषी रहेंगें जिससे प्रजा खुशहाल रह सकेगी।कश्मीर के सातवीं शताब्दी के उत्पल वंश के राजाओं का वर्णन कल्हण ने अत्यंत सूक्ष्मता, तर्कपरता और शुद्धता से किया प्रतीत होता है।

कल्हण धार्मिक संकीर्णता व जातीय असहिष्णुता की भावना से मुक्त था उसके लेखन से प्रतीत होता है कि वह स्पष्टवादी था–उसने उत्तरकालीन कश्मीरी राजाओं की पक्षपात,दुराग्रह,क्षुद्रता, भीरूता की प्रवृत्ति तथा सैनिकों की कायरता व विश्वासघात का खुलकर वर्णन और निंदा की है। ब्राह्मणों के दोषों की भी निंदा की है और राजपूतों की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है।कल्हण ने कश्मीर के राज्य विधान का भी सजीव वर्णन किया है। राजाजयापीड के कायस्थ कर्मचारियों के प्रजा पर किये गये अत्याचारों का भी निर्भीकता से वर्णन किया है।शंकरवर्मा के मन्दिरों की सम्पत्ति जबत करने और बेगार लेने का भी मार्मिक वर्णन किया है। राजा अवन्ति वर्मा के सुधारों,नगर में आई बाढ़ को रोकने व प्रजा की रक्षा कर उन्हें पुनर्वसित करन तथा अन्न के भावों को जनता की क्रय करने की व्यवस्था के अनुरूप करने की योजनाओं की प्रशंसा की है।कल्हण ने बाढ़ों,अग्निकाण्ड़ों और दुर्भिक्षों का ज्वलंत वर्णन किया है।हर्ष के समय भिक्षाचार के शासनकाल में कश्मीर के डामरों की सामन्तशाही, आतंक और उनके उत्पातों का भी उल्लेख है। कल्हण ने इन्हें दस्यु कहा। कायस्थों के जिघृक्षा और नृशंसता रोंगटे खड़े करने वाला चित्रण किया है।

कल्हण ने कश्मीर के राजाओं के समय प्रचलित रातिरिवाज, खान–पान, रहन–सहन,वेशभूषा,परम्पराऐं, संस्कार, अंधविश्वास,शकुन–अपशकुन,समाज में नारी का स्थान,जनश्रुतियां आदि का भी सांगोपांग वर्णन किया है।नारी को उसने सृष्टि की जननी, राजा की रानियों को प्रजानाम मातरम और मातृ शक्ति से सम्बोधित किया। उच्च वर्ग की स्त्रियां सर्वसुख सम्पन्न व विदूषी होती थीं। कल्हण ने निष्पक्षता से विवाहित तपस्वियों के अनाचार,मत्स्य की आहुति देने वाले,मद्यप ब्राह्मण शिक्षकों और तांत्रिकों की भी भर्त्सना की है। [27]

निष्कर्षतः कल्हण की ऐतिहासिक कृति राजरंगिणी ग्यारहवीं–बारहवीं शताब्दी के कश्मीर के भौगोलिक, सामाजिक–सांस्कृतिक,राजनीतिक, अर्थव्यवस्था सम्बन्धित घटनाचक्रों का व्यापक विश्लेषण कर ऐतिहासिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सिद्धान्तों को काव्यमयी भाषा में निरूपित कर सर्वांगीण चित्र प्रस्तुत करती है।यह ऐतिहासिक कृति और इतिहासकार दोनों ही इतिहास के अमूल्य धरोहर हैं। यह ग्रन्थ भारतीय संस्कृति के समन्वयात्मक स्वरूप का परिचायक है। लेखक की शैली में अपूर्व प्रवाह और लालित्य है। कल्हण स्वयं एक प्रगतिशील कवि और इतिहासज्ञ के रूप में भारतीय समाज में प्रतिष्ठित है। भारतीय संस्कृति में कर्म, ज्ञान, और भक्ति ही जीवन व राष्ट्र के अस्तित्व के लिए सार्थकता प्रदान करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.आज पाकिस्तान का पश्चिमी अफगानिस्तान का पूर्वी क्षेत्र अभिसार(कश्मीर रियासत का पुंछ क्षेत्र) व तक्षशिला प्रमुख नगर थे। अस्तित्व 600 ईसा पूर्व से 11 वीं सदी तक रहा।

2. कश्मीर से हिन्दूकुश पर्वत वाल्मीकि रामायण में वाल्हीक के पास स्थित होना बताया है जिसके राजपुर या राजौरी और नन्दीपुर नगर थे।

3. महाभारत काल के पूर्व–दक्षिण में कुरूओं का राज था जिन्होनें पांचालों पर विजय प्राप्त कर विस्तार किया। बौद्ध काल में कुषाणों द्वारा प्रशासित हुआ।

4. आशुतोष, जम्मू कश्मीर(प्रथम संस्करण 2011) : तथ्य, समस्याएँ और समाधान, पृ0 3,जम्मू कश्मीर अध्ययन केन्द्र करगिल भवन, अम्बाला कॉम्लेक्स जम्मू

5- कश्यप,रूद्र,(1975),कश्मीरी समाज भाषा और साहित्य, पृ0 22, सोढ़ी प्रेस हरियाणा।

6. नागराजन;(1970) कान्ट्रीब्यूशन ऑफ कश्मीर,भूमिका,पृ 4 टिप्पणी बैंगलोर ।

7 शिवदत्ता पण्ड़ित;(1997) कश्मीर के ऐतिहासिक साहित्यिक ग्रन्थ, शाह प्रेस,चंडीगढ़ । पृ.12

8 .इयं नृपाणामुल्लासे ह्रासे वा देशकालयोः।भैषज्य भूतिसंवाद कथा युक्तोपयुज्यते।।संक्रान्त प्राक्तनानन्तव्यवहारः सुचेतसः। कश्येदृशो न संदर्भो यदि वा ह्रदयंगमः।।–राजतरंगि.णी–1/21, 22शिवदत्ता पण्ड़ित;(1997),पू.उद्धृत पृ.16

9. राजतरग्णिी– 8/3406–3448 उपर्युक्त,पृ 16–17

10समा द्वाविंशती राज्यावाप्तेः प्राग्भू भुजो गता। तावत्येवाप्तराजस्य पंचविंशतिवत्सरे।। आचार्य,अभिषेक(2000),कल्हण की दृष्टि में कश्मीर, सांची प्रेस,वाराणसी,पृ. 19

11 राजतरंगि.णी–1/48–56 कश्यप,रूद्र,(1975), पूर्व उद्धृत,पृ.29

12 वृहतसंहिता–13/3 कश्यप,रूद्र,(1975), पूर्व उद्धृत,पृ.30

13. संस्कृति(2010)उत्तरार्द्ध (कश्मीर विशेषांक) अंक 19, अर्द्धवार्षिक, संपादक– भारतेश कुमार मिश्र, संस्कृति मंत्रालय, कश्मीर की शैव परम्परा,डॉ वैकुण्ठ नाथ शर्मा पृ.2।

पण्ड़ित,शिवहरे(1998) कश्मीर का प्राकृतिक सौन्दर्य व इतिहास,राज प्रेस,श्रीनगर,कश्मीर पृ. 23

14. कुमार राधा (2018); पैराड़ाईज़ एट वॉर : ए पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ कश्मीर, नई दिल्ली,पृ.2 आईएसबीएन 9789388292122

घई, वेद कुमारी (1968)द नीलमाता पुराण, वोल्यूम 2 जे एण्ड के अकादमी ऑफ आर्ट,कल्चर एण्ड़ लैंग्वेज़, वितरकः मोतीलाल बनारसीदास,दिल्ली।

घई, वेद कुमारी (रिट्राइव्ड़ 2 दिसम्बर,2014) नीलमाता पुराणः ए ब्रीफ सर्वे, श्री परमानन्द रिसर्च इन्स्टीट्यूट, श्रीनगर।

15 राजतरंगिणी–प्रथम तरंग, श्लोक संख्या 14–21

शिवदत्ता पण्ड़ित;(1997),पू.उद्धृत पृ.35

16 शिवदत्ता पण्ड़ित;(1997),पू.उद्धृत पृ.42

17 प्रकाश,बुद्ध(1968),इतिहास–दर्शन,भार्गव भूषण प्रेस,वाराणसी, पृ.20

18 पण्ड़ित,शिवहरे(1998) कश्मीर का प्राकृतिक सौन्दर्य व इतिहास,राज प्रेस,श्रीनगर,कश्मीर पृ. 28

19उपर्युक्त, पृ. 37–38

20 प्रकाश,बुद्ध(1968),इतिहास–दर्शन,भार्गव भूषण प्रेस,वाराणसी, पृ.21

21 राजतरंगिणी–7/860, 7/685 शिवदत्ता पण्ड़ित;(1997),पू.उद्धृत पृ.44

22राजतरंगिणी–7/133–135,7/724, 725, 7/859, 7/1780, 1468, 1486, 1487, 1459

23 पण्ड़ित,शिवहरे(1998) कश्मीर का प्राकृतिक सौन्दर्य व इतिहास,राज प्रेस,श्रीनगर,कश्मीर पृ. 97

24. भारतेश कुमार मिश्र, संस्कृति(कश्मीरविशेषांक) पत्रिका, अंक 19, पृ0 5

25. नदी के जल के समान देश में राजा आते हैं–जाते हैं, किन्तु राजसिंहासन कभी खाली पहीं रहता है। जल की धारा राज का प्रवाह है जो न कभी सूखता है और न लोटकर ही आता है। तरंगिणी की यह धारा अविच्छिन्न रूप में बहती रहती है। तरंगिणी की इस धारा को को कल्हण के बाद 16 वीं शती तक जोनराज(1471–1472 में राजतरंगिणी) और श्रीवर शुक(1486 में जैनराजतरंगिणी) कवियों ने लेखन कर सुखने नहीं दिया।इसके बाद इस परम्परा को 1596 ई. में कश्मीर के शुक पण्ड़ित ने भी राजतरंगिणी कृति की रचना की।

26.कश्मीर के प्रजावत्सल राजा जैनुलाबद्दीन (बडशाह) ने 15वीं शती में कल्हण की कृति का फारसी भाषा में अनुवाद कराया।मुगल सम्राट अकब के आदेश पर अबुल फज़ल ने अपने ग्रंथ आई–ने –अकबरी में कल्हण की इस कृति के कई विवरण समाविष्ट किये है।फ्रांस का विदेशी विद्वान मूरक्राफ्ट जब 1823 में कश्मीर आया तो इसकी एक प्रति फ्रांस ले गया जिसका अनुवाद फ्रेंच भाषा में एम. ट्रोयर ने किया। 1900 ई. के लगभग सर मार्क ऑरेल स्टाइन ने कल्हण कृत राजतरंगिणी का सम्पादन और अनुवाद अंग्रेजी भाषा में किया।1935 ई. में आरएस. पंड़ित ने अंग्रेजी भाषा अंग्रेजी भाषा में करने का उद्देश्य कल्हण की काव्यगत विशेषताओं को उजागर करना था। हिन्दी भाषा में श्री रघुनाथसिंह, गोपीकृष्ण शास्त्री और तेज शास्त्री ने किया। ये सभी अनुवाद मूलतः ज्ञानगर्भित और प्रमाण पुष्ट है। डॉ0 शिबन कृष्ण रैणा, कश्मीरी भाषा और साहित्य, पृ0 17

27प्रकाश,बुद्ध(1968),इतिहास–दर्शन,भार्गव भूषण प्रेस,वाराणसी, पृ.21–22